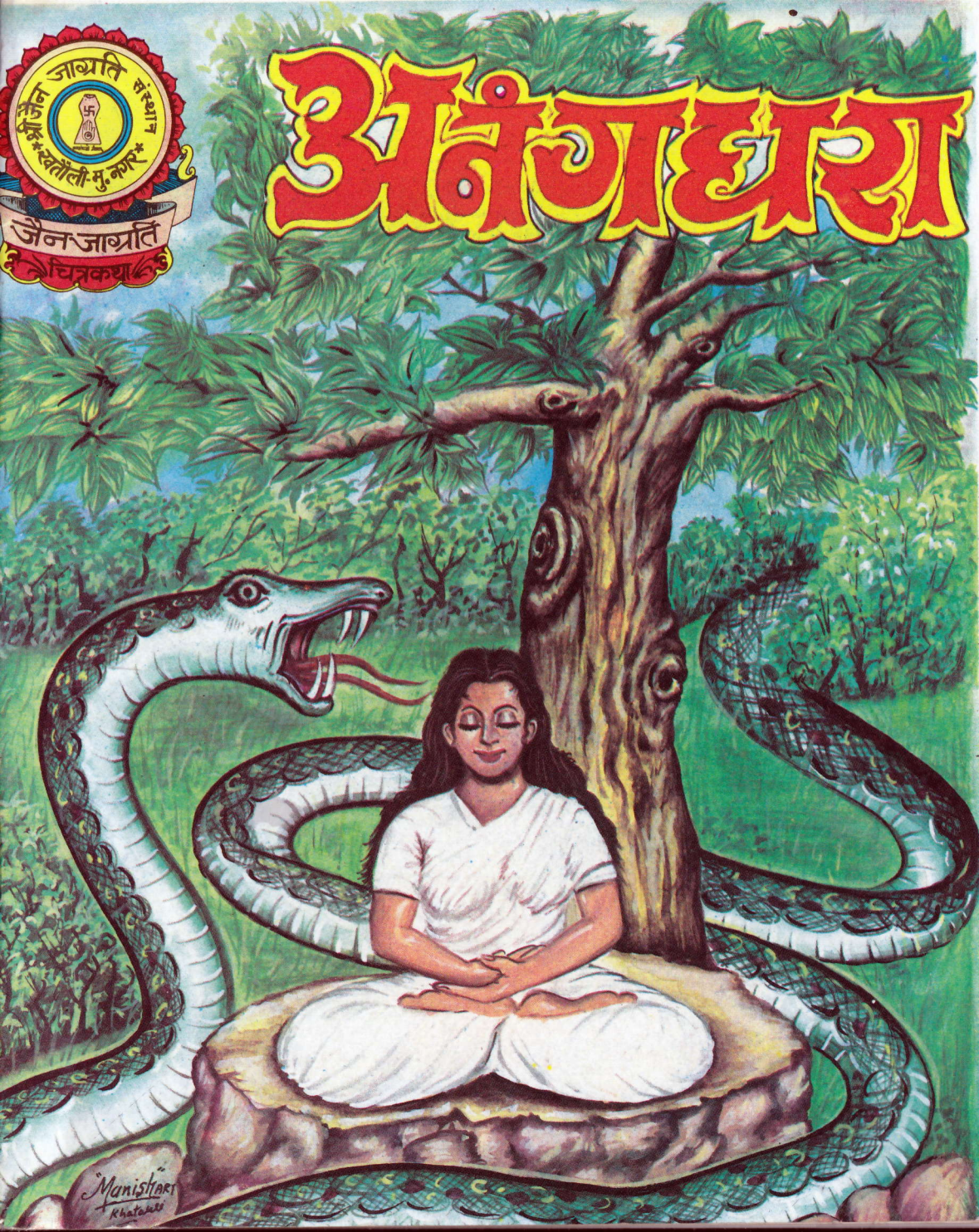

श्री जैन जाग्रति संस्थान
खतौली-मु. नगर
जैन जाग्रति
चित्रकथा
अनंगशरा
"Manish Art"
Khatauli

प्राक्कथन

'अनंगधरा' नामक यह चित्रकथा हमें आज आपके हाथों में समर्पित करते हुए अत्यंत प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। 'अनंगधरा' राम के भाई लक्ष्मण की पत्नी विशल्या के पूर्वभव की अत्यधिक प्रेरणास्पद कहानी हैं, जिसे हमने आचार्य रविषेण द्वारा विरचित 'पद्मपुराण' (सन् 677 ई0) से लिया है।

सभी स्वाध्यायप्रेमी जानते है कि पद्मपुराण, प्रथमानुयोग का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और प्रतिनिधि ग्रन्थराज है, अतः उसके आधार से तैयार हुई इस चित्रकथा के विषय में कुछ कहना सूर्य को दीपक दिखाना है।

अनंगधरा के जीवन से हमें मुख्य रूप से यह शिक्षा मिलती है कि हमें अत्यंत प्रतिकूल परिस्थितियों में भी अपने शील, संयम एवं समतादि गुणों को नहीं छोड़ना चाहिये। अनंगधरा के समाधिमरण का प्रसंग प्रत्येक आत्मार्थी को समाधिमरण के लिये बलवती प्रेरणा और ऊर्जा प्रदान करता है।

यदि प्रस्तुत चित्रकथा को पढ़कर एक भी व्यक्ति समाधिमरण के अभ्यास में जुट गया तो हम अपना प्रयत्न पूरी तरह सफल समझेंगे।

प्रथम संस्करण	:	भगवान महावीर निर्वाण–दिवस 1993 ई0
द्वितीय संस्करण	:	श्रुतपंचमी 1999
मूल्य	:	आठ रुपये मात्र
प्राप्ति स्थान	:	जैन जाग्रति सत्साहित्य विक्रय केन्द्र 32, तगान, खतौली (मुज़फ्फ़रनगर) उ0 प्र0 – 251201 ☎ : (01396) 72666, 73795 (नोट : यहाँ सभी प्रकाशनों का दिगम्बर जैन साहित्य उपलब्ध है।)

::: प्रकाशक :::

श्री जैन जाग्रति संस्थान (रजि0)

32, तगान, खतौली–251201, जिला मुज़फ्फ़रनगर (उत्तर प्रदेश)

● मुद्रक: **प्रगति प्रिन्टर्स टी० पी० नगर, मेरठ।**

अनंगधरा

सम्पादक
प्रोफेसर वीरसागर जैन

लेखक
जाग्रति

चित्रांकन
"मनीष" आर्ट्स, खतौली

लाखों वर्षों पुरानी बात है। महाविदेह क्षेत्र में पुंडरीक नामक देश था। उस देश में स्वर्ग के समान समस्त वैभव से सुसज्जित एक त्रिभुवनानंद नामक नगर था। इस देश में कामदेव-तुल्य चक्रवर्ती सम्राट चक्रधर राज्य करते थे। चक्रधर बहुत ही न्याय-प्रिय व कुशल शासक थे! उनके राज्य में प्रजा बहुत ही सुखी थी! - किसी को कोई दुःख - नहीं था! एक दिन - जब राजा चक्रधर नित्य की भाँति राजदरबार - में बैठे हुए थे। तभी महलों से एक दासी ने दरबार में प्रवेश किया।

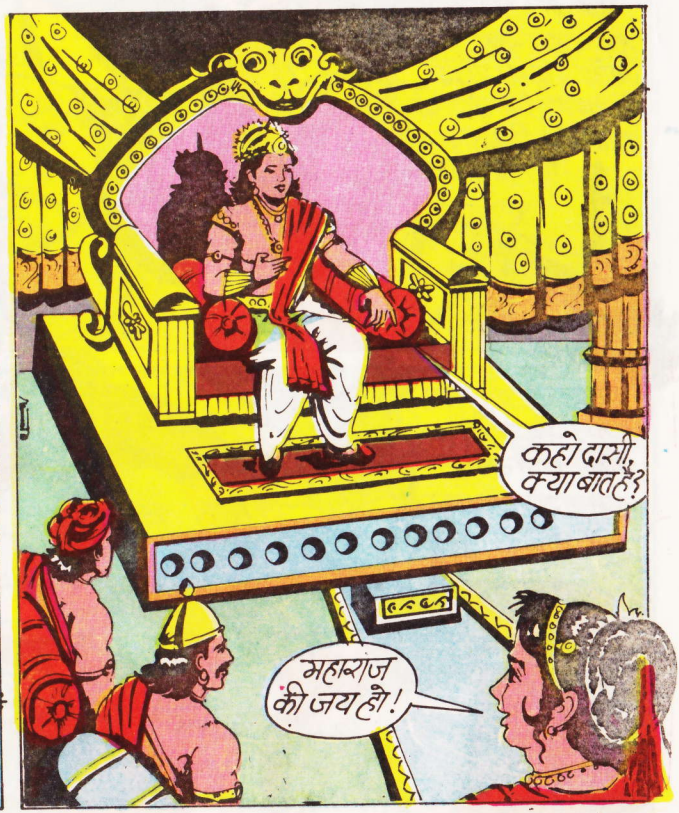

महाराज! - महारानी जी ने एक चन्द्रमा के समान सुन्दर पुत्री को जन्म दिया है।
अहा! धन्य- पुत्री का जन्म! धन्य है! लो दासी यह लो।
मंत्री जी! आज हम बहुत खुश है। जाओ - जिन मंदिरों मे अनुष्ठान कराओ व राज्य में मिष्ठान्न वितरित कराओ
जो आज्ञा महाराज!
महारानी! आज हम बहुत खुश हैं। हम अपनी पुत्री का - नामकरण घुमधाम से करेंगे।
जैसी आपकी इच्छा स्वामी!

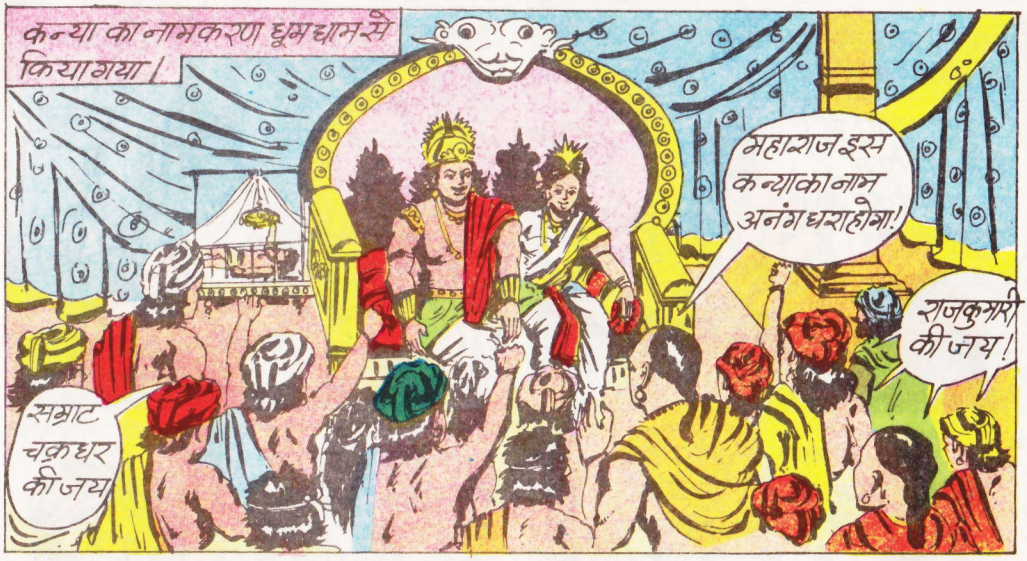

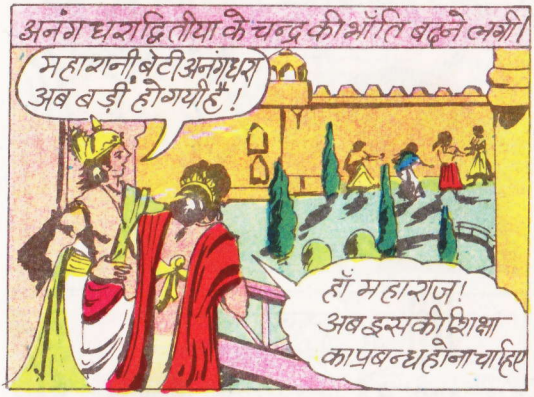

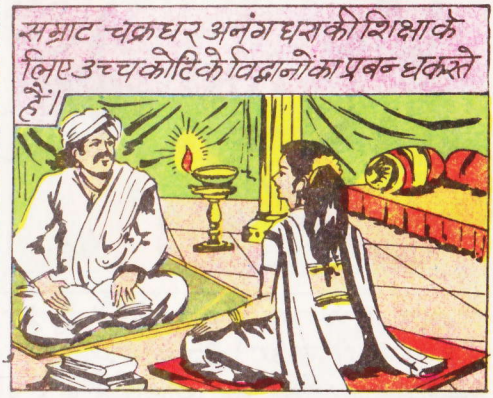

कन्या का नामकरण धूमधाम से किया गया।
महाराज इस कन्या का नाम अनंगधरा होगा!
राजकुमारी की जय!
सम्राट चक्रधर की जय
अनंगधरा द्वितीया के चन्द्र की भाँति बढ़ने लगी।
महारानी, बेटी अनंगधरा अब बड़ी हो गयी है!
हाँ महाराज! अब इसकी शिक्षा का प्रबन्ध होना चाहिए
सम्राट चक्रधर अनंगधरा की शिक्षा के लिए उच्च कोटि के विद्वानों का प्रबन्ध करते हैं।
काक चेष्टा, वको ध्यानम्, श्वान निद्रा तथैव च। अल्पाहारी गृहत्यागी विद्यार्थी पंच लक्षणः।
शाबाश पुत्री! अब इसका अर्थ बताओ।
अर्थात कौए के समान दृष्टि, बगुले के समान-ध्यान, श्वान की तरह निद्रा, अल्पाहार, गृह त्याग, ये विद्यार्थी के पाँच लक्षण हैं।

सम्राट चक्रधर राजकुमारी की धार्मिक शिक्षा का भी प्रबन्ध करते हैं।

देखो पुत्री! मैं तुम्हें संक्षेप में जिनवाणी का रहस्य बताता हूँ।

जिसे जीवन में उतारने पर — तुम्हारा कल्याण होगा।

यह संसार छः द्रव्यों के समूह से मिलकर बना है इसे बनाने वाला कोई नहीं है यह स्वनिर्मित है।

फिर भगवान् क्या करते हैं, गुरुजी?

भगवान तो वीतरागी, सर्वज्ञ और हितोपदेशी हैं। वे तो मात्र जानते हैं और देखते हैं।

जो ज्ञाता-द्रष्टा हो और सुख दुःख का अनुभव करता हो उसे चेतन द्रव्य कहते हैं

जो ज्ञाता द्रष्टा न हो और सुख-दुःख का अनुभव न करता हो उसे अचेतन द्रव्य कहते हैं।

अच्छा तो मैं जीव हूँ और महल मकानादि अजीव है न!

हाँ, शाबास!

गुरुजी! जीव-अजीव को पहिचानने से क्या लाभ है?

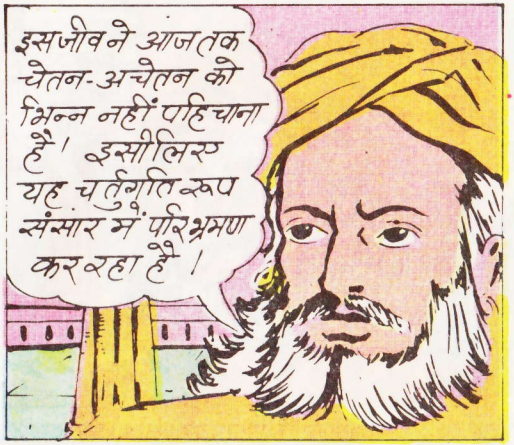
इस जीव ने आज तक चेतन-अचेतन को भिन्न नहीं पहिचाना है। इसीलिए यह चर्तुगति रूप संसार में परिभ्रमण कर रहा है।

यह जीव अपनी - अज्ञानता से पर पदार्थों में इष्ट अनिष्ट की - कल्पना कर रागद्वेष करता है।

इस प्रकार सभी जीव स्वयं की भूल के कारण दुःखी हैं और भूल सुधार कर सुखी हो सकते हैं।

कोई किसी को सुख या दुःख नहीं दे सकता व मार या जिला नहीं सकता।

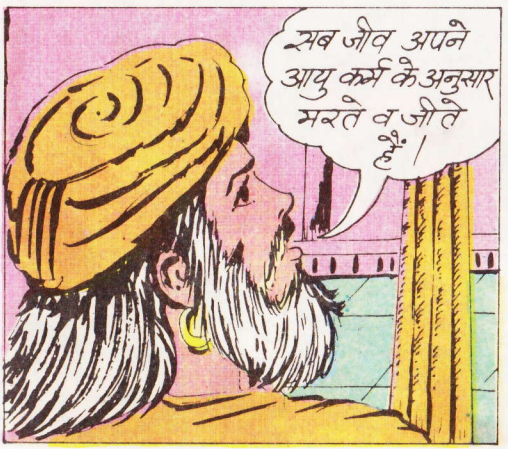
सब जीव अपने आयु कर्म के अनुसार मरते व जीते हैं।

तो गुरूदेव! सच्चा सुख कैसे प्राप्त होगा?

यदि यह आत्मा कहीं भी रागद्वेष न करे और
अपने ज्ञान स्वरूप में ही सावधान रहे तो सच्चा सुख प्राप्त कर सकता है।

राग-द्वेष ही सबसे बड़ी मलीनता है।

अतः हमें कितनी भी विषम परिस्थितियाँ क्यों न आयें, अपने परिणाम मलिन नहीं बनाने चाहिये। सदा समता भाव धारण करना चाहिये।
इस प्रकार अनंगधरा को धार्मिक ज्ञान भी हो जाता है।

इस प्रकार वह सुन्दर बालिका समय के साथ बढ़ते हुए अपनी यौवनावस्था को प्राप्त होती है।

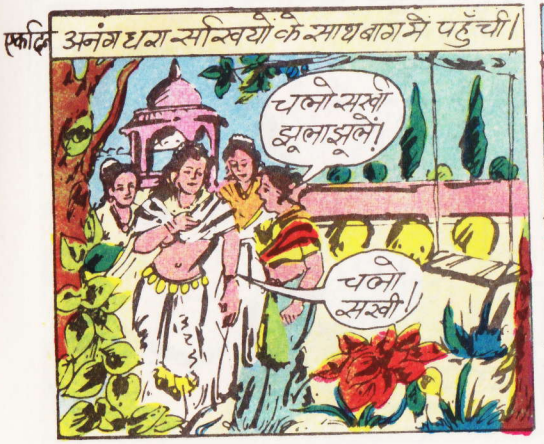
एक दिन अनंगधरा सखियों के साथ बाग में पहुँची।
चलो सखी झूलाझूलें।
चलो सखी।

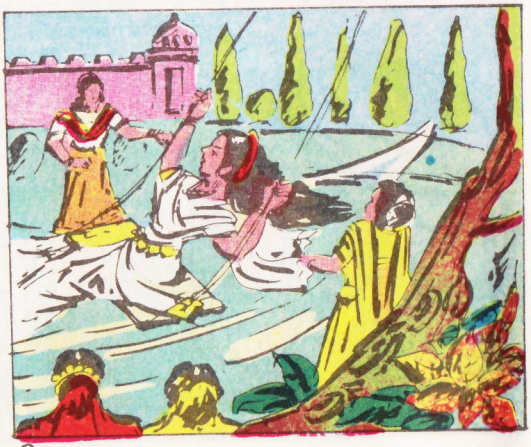

तभी आकाश मार्ग से गमन करते हुए प्रतिष्ठित पुर के राजा विद्याधर पुनर्वसु की दृष्टि झूलती अनंगधरा पर पड़ गयी-
आह! कितनी रूपमती कन्या है ये! क्यों न इसे अपनी बना लूँ?
विद्याधर अनंग धरा पर मोहित हो नीचे उतर आया
कौन हो तुम?
हे सुन्दरी मैं तुम्हें अपनी रानी बनाना चाहता हूँ!
नहीं ये नहीं हो सकता!
अनंग धरा के इंकार पर वह उसे बल-पूर्वक विमान में बिठा कर उड़ गया
भागो!
महाराज को खबर दो-
महाराज, गजब हो गया, महाराज
क्या-हुआ?
एक विद्याधर राजकुमारी जी को उठा ले गया!
महाराज अपने सेनापति को आदेश देते हैं-....
सेनापति! जाओ तुरन्त उस दुष्ट से किसी भी प्रकार अनंग धरा को छुड़ा कर लाओ।
जो आज्ञा महाराज!

सेनापति अपने वीरों के साथ विमान द्वारा— विद्याधर के पीछे लग गया—
वह रहा दुष्ट, चलो तेज चलो!
सावधान! दुष्ट विद्याधर! राजकुमारी को छोड़ दो अन्यथा तू बेमौत मारा-जायेगा!
विद्याधर सेनापति की बात न सुन उल्टे आक्रमण कर देता है!-
ले— संभाल मेरा वार!
लेकिन सेनापति उस वार की- काट देता है-
छनाक
इसके बाद सेनापति एवं अन्य योद्धा एक साथ वार कर देते हैं!-
इस आक्रमण से विद्याधर का विमान टूट जाता है!

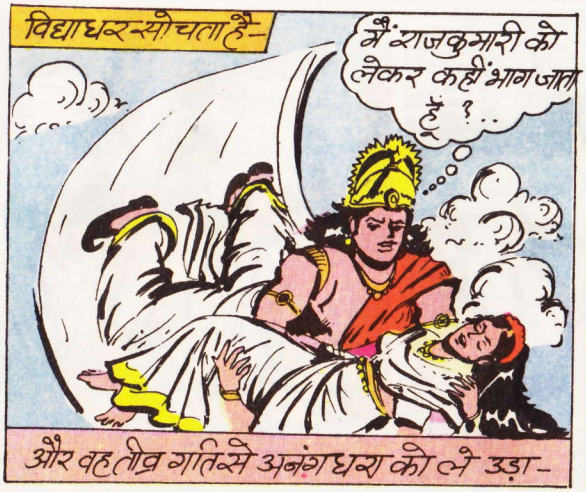

विद्याधर सोचता है-
मैं राजकुमारी को लेकर कहीं भाग जाता हूँ ?..
और वह तीव्र गति से अनंगधरा को ले उड़ा-
सैनिको वह बहुत - तेजी से जा रहा है देखो कहीं भाग न जाय!
अरे ये सैनिक तो मेरा पीछा ही नहीं छोड़ रहे हैं!
वह घबराकर नीचे देखता है-
नीचे भयानक अटवी देखकर वह सोचता है!
क्यों न मैं राजकुमारी को इस भयानक अटवी में छोड़ दूं!
इधर सैनिक-
अरे! कहाँ गया!
?
अभी तो यहीं था?
तभी विद्याधर अकेला भागता दिखाई देता है-
अरे! वह रहा छूट पकड़ो उसे!
लेकिन विद्याधर भाग निकला

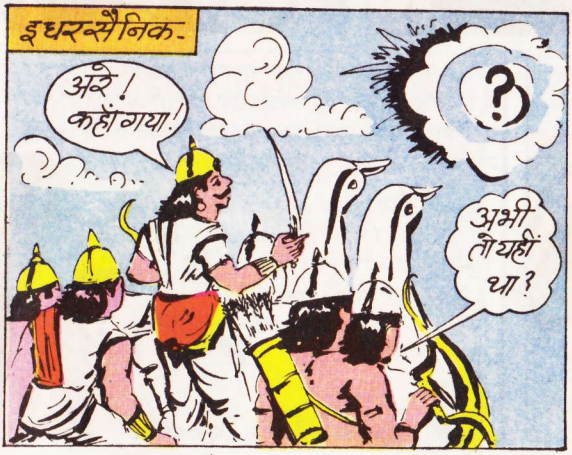

सेनापति जी! वह तो कहीं भाग गया है।
कोई बात नहीं, राजकुमारी जी को ढूंढो, वे यहीं कहीं होगी।
सैनिक भयानक अटवी में अनंगधरा को खोजते हैं।
राजकुमारी जी ऽऽ
राज-कुमारी-जी ऽऽ
लेकिन उस अटवी में राजकुमारी नहीं मिली
वापस आने पर सेनापति समस्त घटना बताता है। महाराज एवं रानी सब सुनकर अत्यन्त दुखी होते हैं।
आह! ये क्या हुआ? न जाने हमारी फूल सी राजकुमारी इस समय किस दशा में होगी?
महामंत्री जी! जंगल का चप्पा-चप्पा छान डालो हमें हमारी पुत्री चाहिए। जाओ मंत्री जाओ।
राजकुमारी की खोजने सैनिक सभी दिशाओं में जाते हैं। परन्तु अनंगधरा नहीं मिलती-
हे प्रभो! हमने कौनसे पाप किये थे जो हमें ये दिन भी देखने को मिल रहे हैं।
इस प्रकार सारा राज्य शोक में डूब गया-
इधर कुछ समय पश्चात् कामांध विद्याधर अनंगधरा को लेने वापस अटवी में आता है। लेकिन उसे अनंगधरा नहीं मिलती- तो उसके मन में वैराग्य उत्पन्न होता है।
आह! इस संसार मे संयोग-वियोग सब कर्माधीन हैं। मुझे चाहिये कि मैं पाप मुक्त हो आत्म कल्याण करूं।

ऐसे वैराग्य पूर्ण विचार करते हुए विद्याधर पुनर्वसु मुनिराज द्रुमसेन के पास जाता है -
हे मुनिवर! मैं इस संसार से अत्यन्त दुःखी हो चुका हूँ अतः मुझे कल्याण का सच्चा मार्ग बताइये!
हे भव्य जीव! तुम्हारी भली होनहार है जिससे कि तुम्हें इस संसार में अत्यन्त दुख भासित हुआ है।
और आत्म कल्याण की अभिलाषा हुई।
हे भव्य! यह जीव कषायवश अपना हित-अहित भूलकर पागल की भाँति आचरण करता हुआ अनंत दुःख भोगता है!
देखो काम कषाय की अत्यन्त दुःखरूपता, कि जिसके कारण बड़े बड़े ज्ञानी-ध्यानी भी अंधे हो जाते हैं!
उल्लू को तो केवल दिन में नहीं दिखता व कौए को केवल रात्रि में नहीं दिखाई देता -- परन्तु कामान्ध प्राणी को तो न दिन में दिखता है, न ही रात्रि में।
कामी जीव अन्ध से भी अन्ध महान्ध होता है।

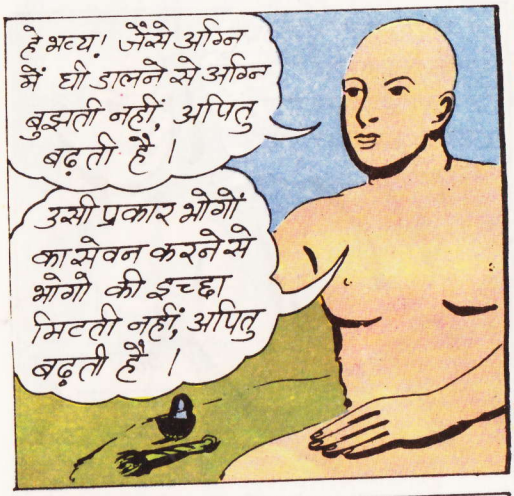
हे भव्य! जैसे अग्नि में घी डालने से अग्नि बुझती नहीं, अपितु बढ़ती है।
उसी प्रकार भोगों का सेवन करने से भोगों की इच्छा मिटती नहीं, अपितु बढ़ती है।

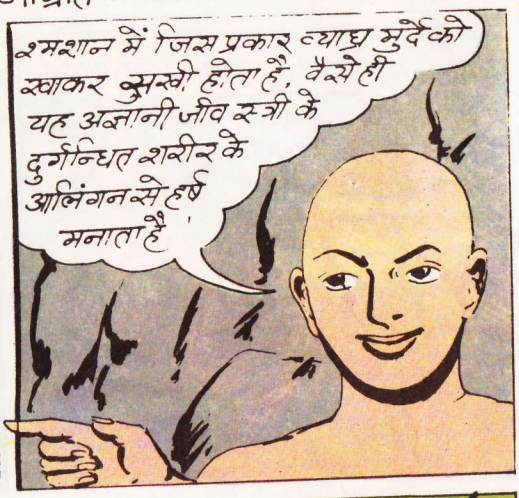
श्मशान में जिस प्रकार व्याघ्र मुर्दे को खाकर सुखी होता है, वैसे ही यह अज्ञानी जीव स्त्री के दुर्गन्धित शरीर के आलिंगन से हर्ष मनाता है।

अंतः हे जीव! भोगों का त्याग कर आत्मानुभूति पूर्वक संयम धारण करने का उपाय करना चाहिए।

अतः अपनी आत्मशक्ति को शरीर, इन्द्रियों, विचारों और विकल्पों से हटाना चाहिये।

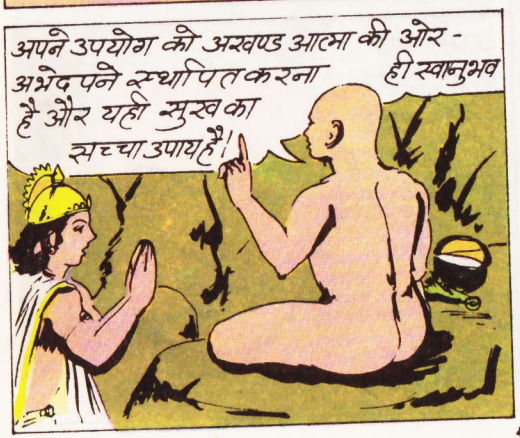
अपने उपयोग को अखण्ड आत्मा की ओर - अभेद पने स्थापित करना ही स्वानुभव है और यही सुख का सच्चा उपाय है।

पुनर्वसु वैराग्य पूर्वक कहते हैं।
हे प्रभु! मुझे शीघ्र ही जैनेश्वरी दीक्षा प्रदान कीजिये।

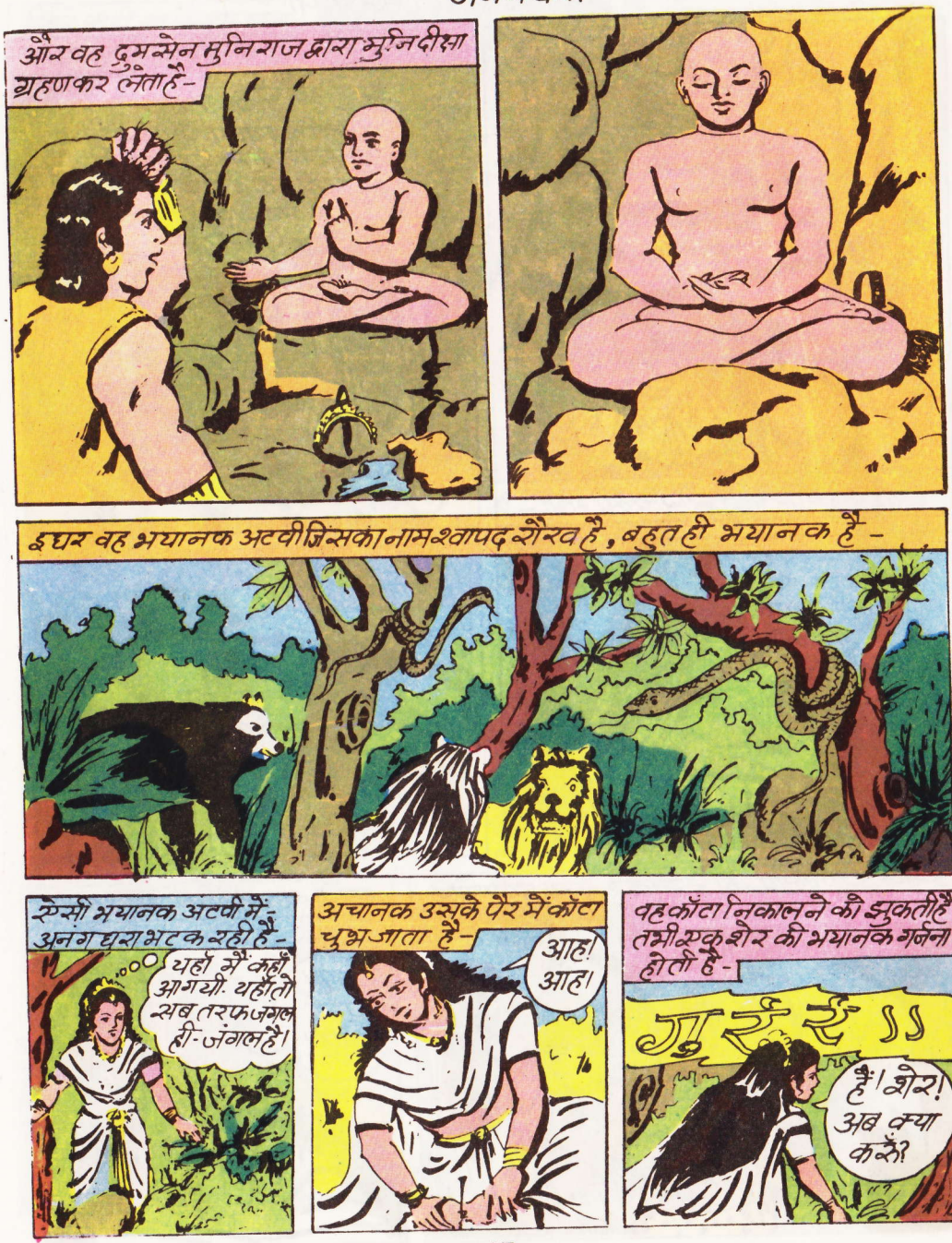

और वह द्रुमसेन मुनिराज द्वारा मुनिदीक्षा ग्रहण कर लेता है-
इधर वह भयानक अटवी जिसका नाम श्वापद रौरव है, बहुत ही भयानक है -
ऐसी भयानक अटवी में-अनंगधरा भटक रही है-
यहाँ मैं कहाँ आ गयी. यहाँ तो सब तरफ जंगल ही-जंगल है।
अचानक उसके पैर में काँटा चुभ जाता है-
आह! आह!
वह काँटा निकालने को झुकती है तभी एक शेर की भयानक गर्जना होती है -
गुर्रं ॥
हैं! शेर! अब क्या करूँ?

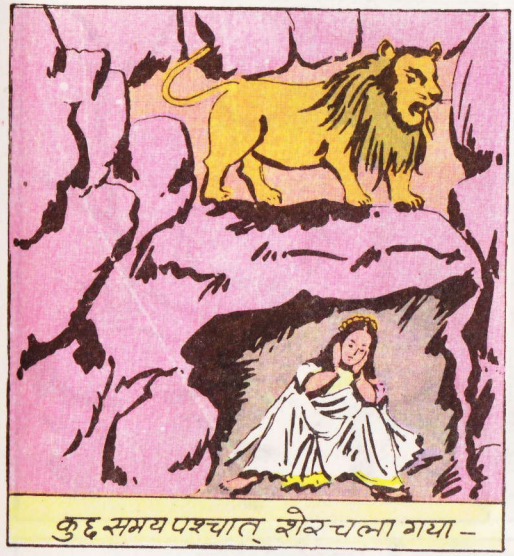

कुछ समय पश्चात् शेर चला गया –

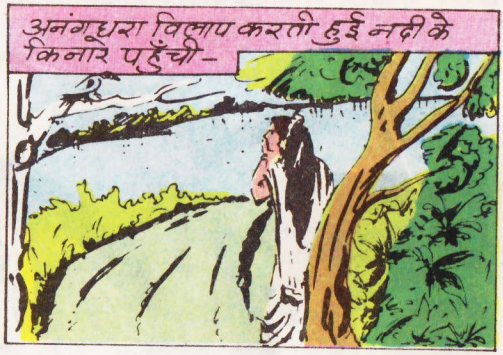

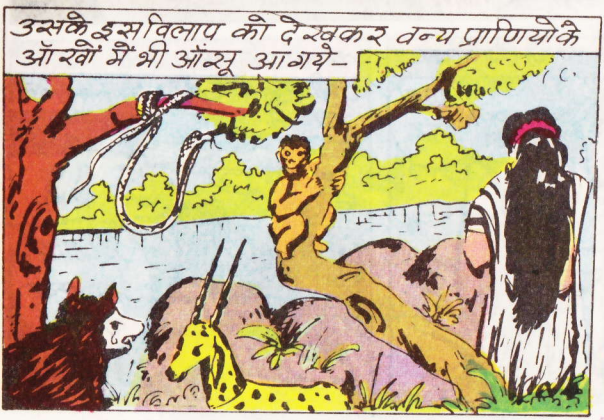

फिर सर्दी का मौसम आया-

हे जिनेन्द्र देव! अब मैं क्या करूँ!

इस प्रकार मौसम बीतने लगे अनंगधरा को संसार की असारता का ख्याल आया-

हे भगवान! ये संसार बड़ा दुःख पूर्ण है! जो मेरे चक्रवर्ती की पुत्री का पुण्य होने पर भी मुझे ये दुःख झेलने पड़ रहे हैं!

इस संसार में कोई अपना नहीं है! - प्रत्येक जीव स्वार्थी है!

प्रत्येक द्रव्य अपनी अपनी पर्याय का कर्ता है! कोई भी पर का कर्ता नहीं है!

मैंने बचपन में सीखा है कि प्रत्येक जीव अपनी भूल के कारण दुःखी है, परपदार्थ के कारण नहीं!

अतः हमें जगत के प्रति रागद्वेष न करके समताभाव धारण करना चाहिये और अपने स्वरूप में सावधान रहना चाहिए!

इस प्रकार वैराग्य प्रगट होने पर वह आत्म भावना में लीन होने लगी-

स्वं वह धर्म भावनाओं का चिंतन करती है

प्रेम भाव हो सब जीवों से,
गुणी जनों में हर्ष प्रभो !
करुणास्रोत बहे दुखियों पर,
दुर्जन में मध्यस्थ विभो ॥

इष्ट-वियोग अनिष्ट-योग में,
विश्व मानता है मातम।
हेय सभी हैं विश्व वासना,
उपादेय निर्मल आतम ॥

स्वयं किये जो कर्म शुभाशुभ,
फल निश्चय ही वे देते।
करे आप फल देय अन्य तो,
स्वयं किये निष्फल हो तो॥

अपने कर्म सिवाय जीव को,
कोई न फल देता कुछ भी।
'पर देता है' यह विचार तज,
स्थिर हो छोड़ प्रमादी बुद्धि॥

उसके तप के प्रभाव से हिंसक जीव भी अहिंसक हो गये

वह फलों को खाकर स्वं उपवास आदि से रहकर निज आत्मा की साधना करने लगी-

इस प्रकार ३००० वर्ष बीत गये।-

एक दिन जब अनंगधरा सामायिक में बैठी थी तो उसे ज्ञान हुआ।-

ओह! मेरी आयु तो मात्र ६: दिन की शेष रह गयी है!

मुझे अब अपनी गति सुधारने के लिए अधिक ध्यान व तप करना चाहिये।

न जाने इस बार कौन गति बँधे, लेकिन मुझे अपनी मुक्ति के लिए प्रयत्न करना चाहिये!

वह संलेखना धारण कर नियम लेती है कि -

आज से मैं अपने चारों ओर सौ पग भूमि से आगे नहीं जाऊँगी।

कोई भी परिस्थिति हो, पर मैं अपना नियम भंग नहीं करूँगी!

और अपनी आत्म साधना में लग जाती है।

अब वह अधिक आत्मभावना में लीन रहने लगी-

एक दिन आकाश मार्ग से अरहदास नामक एक विद्याधर सुमेरु पर्वत की वन्दना कर लौट रहा था तो अनंगधरा को देखता है-

अरे! यह तो कोई राजकन्या है!

वह नीचे उतर कर अनंगधरा के समीप आता है-

पुत्री तुम कौन हो और भयानक अटवी में क्या कर रही हो?

सुनकर-

पुत्री तुम मेरे साथ विमान में अपने पिता के घर चलो

अनंगधरा ने उत्तर दिया-

हे तात! मैंने तो संलेखना ले ली है सो मैं अब नहीं जाऊंगी।

अनंगधरा ने सारी कहानी सुनाई

पुत्री मैं तुम्हारे पिता को जाकर तुम्हारी सूचना देता हूं।

और विद्याधर वहाँ से चला गया-

वन में अनंगधरा अपनी आत्मा की भावना में लीन हो गयी-

तभी एक भयानक अजगर - उधर आता है-
फ़ूँ फ़ूँऽऽ
वह काल की तरह अनंगधरा की ओर बढ़ता है-
अनंगधरा आत्मभावना में लीन है उसके चेहरे पर भय का कोई निशान नहीं आता है
और वह दुष्ट अजगर अनंगधरा को पूरा ही निगलने लगता है-
इधर विद्याधर सम्राट चक्रधर के दरबार में आकर अनंगधरा की सूचना देता है। सम्राट बहुत प्रसन्न होते है-
क्या? हमारी पुत्री जीवित है चलो मित्र जल्दी चलो वहाँ जहाँ हमारी पुत्री है। हमें वहाँ ले चलो।
हाँ महाराज! राजकुमारी जीवित है चलिये महाराज।
जब अजगर अनंगधरा को - निगल रहा था। तभी सम्राट वहाँ आजाते है-
हे भगवान! ये क्या, मेरी पुत्री अनंगधरा

चक्रवर्ती क्रोध में चक्रका आहवान करते हैं चक्र प्रकट हो जाता है।
घबराना नहीं पुत्री! मैं अभी इस दुष्ट का काम तमाम करता हूँ
तभी अनंगधरा चीख उठती है -
नहीं नहीं ऽऽ पिताजी नहीं!
इस निर्दोष प्राणी को मत मारिये
अहो ये है अहिंसाका अद्भुत स्वरूप!
लेकिन...
पिता जी आप इसे क्षमा कर दीजिये मेरा तो आयु कर्म पूरा हो गया है इसमें इसका कोई दोष नहीं है।
पिताजी आत्मा अजर अमर है, उसे कोई नहीं मार सकता है। फिर ये अजगर मुझे क्या मारेगा?
अजगर पिता के सामने पुत्री को पूर्णतः निगल जाता है।
अहम् इक्को'

अनंगधरा शरीर तजकर तीसरे स्वर्ग में देवांगना होती है -

इधर पुत्री का करुण अंत देखकर सम्राट चक्रधर को वैराग्य हो आता है

अहो! यह संसार तो अत्यन्त दुःख मय है!

धिक्कार है मुझे कि मैं इस संसार की वृद्धि कर रहा हूँ!

मुझे तो संसार के नाश करने का उपाय करना चाहिये!

इस प्रकार वैराग्य पूर्ण विचार करते हुए वे राज्य में वापस लौटते हैं और अपने बाईस हजार पुत्रों को बुलाते हैं

पुत्रों! मैं अपने आत्म कल्याण के लिए मुनि दीक्षा ले रहा हूँ!

लेकिन पुत्रों के मन में भी वैराग्य हिलोरे ले रहा था अतः वे कहते हैं -

पिता श्री! हम भी अब इस संसार में नहीं रहना चाहते अतः हम भी मुनि दीक्षा अंगीकार करेंगे!

महाराज ऐसा सुनकर - गद् गद् हो जाते हैं!

धन्य हो पुत्रों! तुम धन्य हो!

और सारा वातावरण वैराग्य मय हो जाता है

चक्रधर अपने बाईस हजार पुत्रों के साथ मुनिराज के समक्ष पहुचते हैं

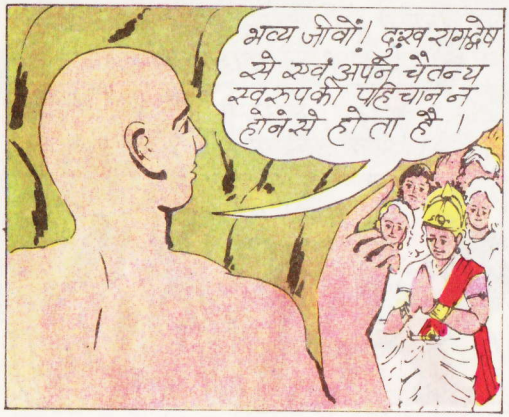

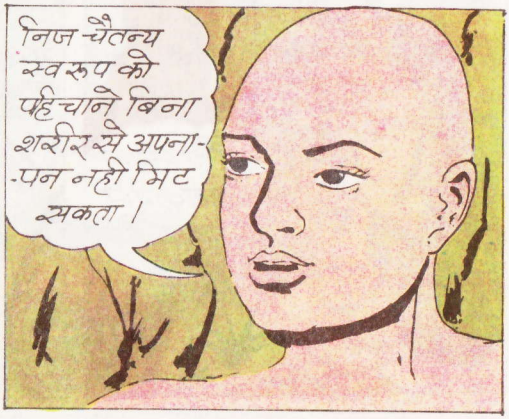

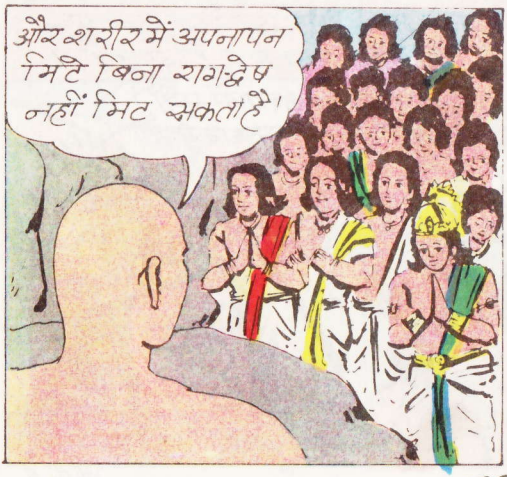

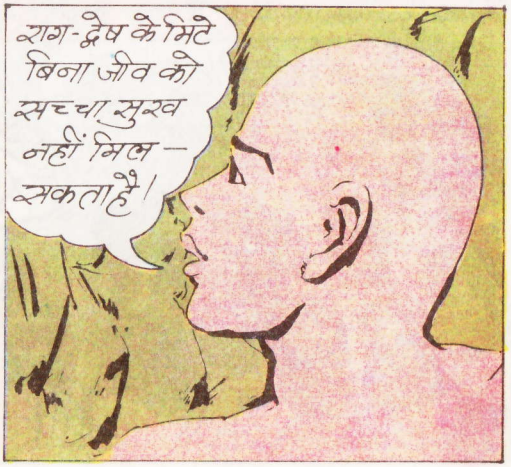

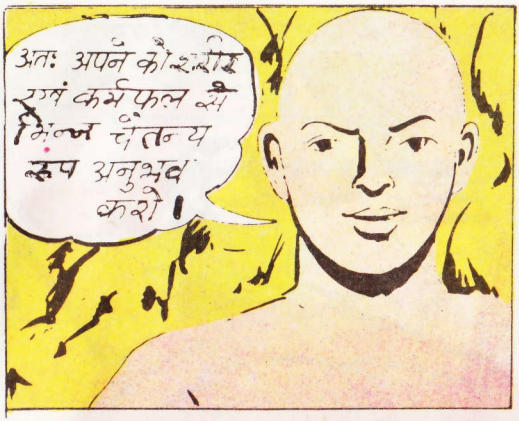

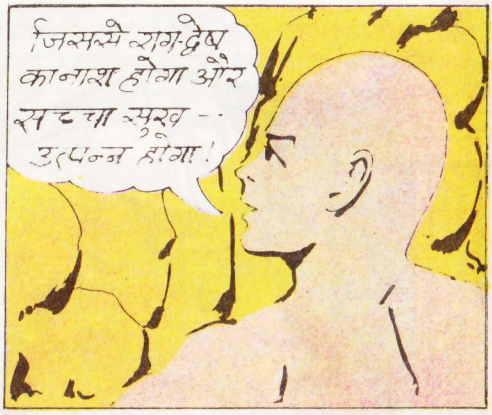

अतः अपने को शरीर एवं कर्मफल से भिन्न चैतन्य रूप अनुभव करो।
जिससे राग-द्वेष का नाश होगा और सच्चा सुख उत्पन्न होगा!
मुनिराज सभी को जैनेश्वरी दीक्षा प्रदान करते हैं-
सभी मुनिराज अपनी आत्म साधना में लीन हो जाते हैं-

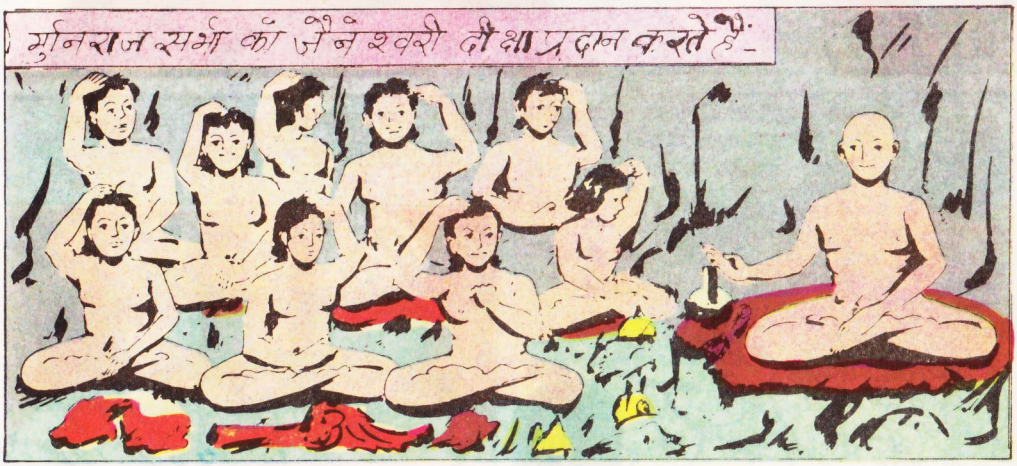

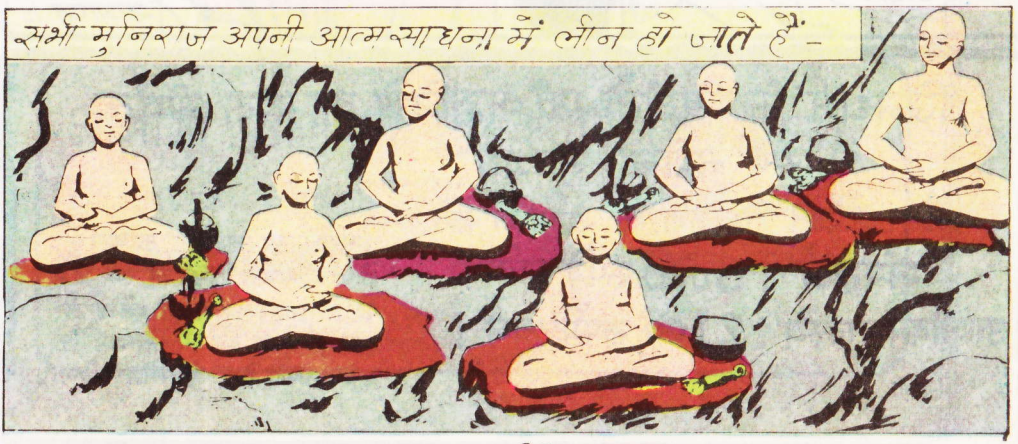

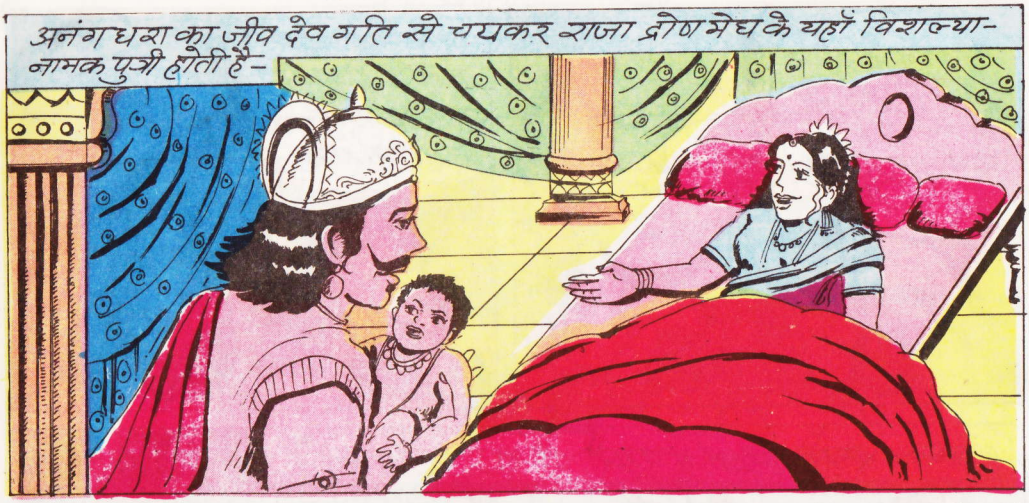

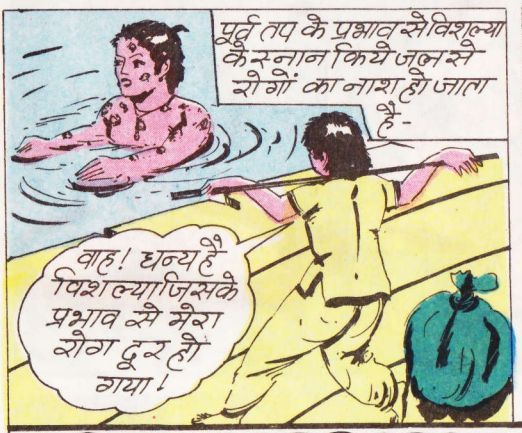

जिनधर्म के सिद्धांतों एवं कहानियों का एक जीवंत एवं नवीन माध्यम.....

जैन जागृति चित्रकथा के सहयोगी बने —

संरक्षक : 5000 रुपये मात्र।

आजीवन सदस्य : 2100 रुपये मात्र।

आपका यह सहयोग आबाल - गोपाल, किशोरों, युवाओं एवं प्रौढ़ो की तो ज्ञान का कारण बनेगा ही साथ ही साथ हमें भी जिनधर्म के प्रचार - प्रसार हेतु प्रोत्साहित करेगा!

अवश्य पढ़िये :

- ✓ जिनवाणी को आखिर क्यों लिखा गया ?
- ✓ जिनवाणी को कैसे लिखा गया?
- ✓ जिनवाणी को सर्वप्रथम किसने लिखा?

इन सभी सवालों के जवाब के लिये अवश्य पढ़ें .....

रोमांचक चित्रकथा

षट्खंडागम

आगामी प्रकाशित चित्रकथाएँ (कॉमिक्स)

1. अकलंक - निकलंक
2. आचार्य समन्तभद्र
3. आचार्य कुन्दकुन्द
4. आचार्य मानतुँग
5. मुनि गजकुमार
6. पंडित टोडरमल

बच्चों में धार्मिक संस्कार डालिये

रविवार का दिन है। आज छुट्टी है। रमेश का घर है

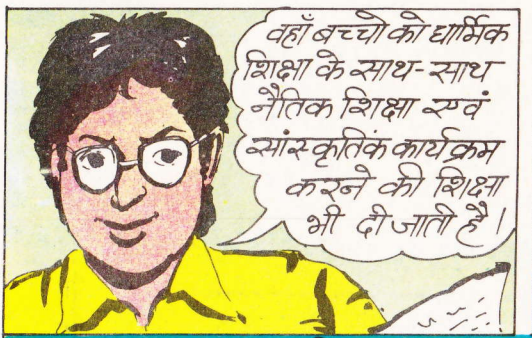

जी हाँ! आप भी अपने बच्चों में धार्मिक संस्कार हेतु अपने बच्चों को अपने यहाँ जैन धार्मिक पाठशाला में आज ही से भेजें।